अनुबोधन, खण्ड 2, अंक 2, अप्रैल–जून 2026, पृष्ठ 9–12
ISSN: 3049-4184 (प्रिन्ट) 3108-1185 (ऑनलाइन)
https://doi.org/10.65885/anubodhan.v2n2.2026.053

उत्तररामचरितम् भवभूर्तिविशिष्यते : एक समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ. प्रीति शुक्ला *

प्राप्तिः 9 अप्रैल 2026 / संशोधित: 11 अप्रैल 2026 / स्वीकृतः 12 अप्रैल 2026 / प्रकाशित ऑनलाइन: 21 अप्रैल 2026
जर्नल वेबसाइटः https://anubodhan.org

सारांश

साहित्य का अस्तित्व मानव जीवन में उस दीप्तिमान ज्योति के समान है जो कि किंकर्तव्यता की स्थिति में "किं करणीयम् वा किं अकरणीयम्" के द्वन्द में फँसे मनुष्य के पथप्रदर्शन का कार्य करती है। विशेषतः संस्कृत साहित्य का अथाह भण्डार अनेकों ऐसे ग्रन्थों रूपी रत्नों से भरा हुआ है जो मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष का निदर्शन करते हैं। आदिकवि वाल्मीकि, महाकवि कालिदास, भारवि, माघ, दण्डी आदि अनेकों आचार्यों ने अपनी अपनी रचनाओं के माध्यम से संस्कृत साहित्य के इस विशाल कोशागार का मानव सभ्यता के हितसाधन के लिए निरन्तर अभिवर्धन किया है। इन्हीं कवियों में अन्यतम संस्कृत साहित्य के महान कवि एवं आचार्य भवभूति का नाम अन्यतम है जिनकी रचना "उत्तररामचरितम्" है। यद्यपि भवभूति ने तीन नाट्य ग्रन्थों का प्रणयन किया है, परन्तु उनकी कीर्ति का प्रमुख आधार स्तम्भ "उत्तररामचरितम्" ही है। ऐसा मत संस्कृत सहित्य जगत में प्रचलित है। प्रस्तुत शोधपत्र में इसी मत की तर्कसंगतता का समीक्षात्मक वर्णन किया गया है।

बीज शब्द : उत्तररामचरितम्, भवभूति

प्रस्तावना

देवभाषा संस्कृत की महनीयता रूपी नदी का अजस्रप्रवाह यद्यपि युगयुगान्तर से अनवरत प्रवाहमान है तथापि यह प्रवाह सर्वदा से ही अपने विस्तार एवं गतिशीलता में अनेकों वैचित्र्य तथा विभिन्नताओं रूपी सहायक जलस्रोतों को उनके मूल स्वरूप के साथ अंगीकार करने वाली अथाह जलराशि रूपी साहित्य का ऊर्जास्रोत भी है। भारतवर्ष में संस्कृत साहित्य की उपादेयता एवं महत्व का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि अनादिकाल से हमारी इस देवभाषा ने न जाने कितने ऐसे ग्रन्थ रूपी मुक्ताओं का अमूल्य भण्डार मानव जाति को प्रदान किया जिनके सुव्यवस्थित गुम्फन से मानव सभ्यता समय की प्रवाहमान धारा के साथ परिवर्तन को अंगीकार करते हुए भी अद्यावधि जीवन्त एवं मानवता के मूलभूत तत्वों एवं उद्देश्यों को सदैव स्वयं के अस्तित्व में प्रकाशित एवं मुखरित किए हुए है। संस्कृत साहित्य के इन्हीं मुक्तारूपी ग्रन्थों में अन्यतम एक नाट्यग्रन्थ है – भवभूति कृत उत्तररामचरितम्।

दक्षिणभारत के 'पद्मपुर' नामक स्थान में कृष्णयजुर्वेदीय तैत्तिरिय शाखा के अध्येता काश्यप गोत्रीय उदुम्बर नामक बह्मवादी ब्राह्मण कुल में उत्पन्न नीलकण्ठ एवं जातुकर्णी के पुत्र महाकवि भवभूति को संस्कृत नाट्य साहित्य में एक सम्माननीय स्थान प्राप्त है। काव्यशास्त्र के रीतिवादी आचार्य वामन के ग्रन्थ "काव्यालंकार सूत्रवृत्ति" में उत्तररामचरितम्

* रामनगर, वाराणसी
ई-मेल: pritishukla444@gmail.com

से उद्धृत एक पद्य को आधार मानकार प्राचीन आचार्यों के द्वारा एकमत से भवभूति का स्थितिकाल 700 ईसवीं के आसपास माना गया।

महाकवि भवभूति की तीन नाट्य कृतियाँ हैं महावीर चरितं, मालतीमाधवं एवं उत्तररामचरितम्। इनकी तीनों ही कृतियाँ यद्यपि उत्कृष्ट श्रेणी की हैं, परन्तु भवभूति की कीर्तिपताका का प्रमुख आधारस्तम्भ उत्तररामचरितम् को ही माना जाता है। यह उनकी प्रौढ एवं उदात्त कृति है।

उत्तररामचरित महाकवि भवभूति की वह अनुपम कृति है जिसमें उनकी नाट्यकाव्यरचना एवं कवित्व शक्ति अपनी चरम परिणति को प्राप्त हुई है। उत्तररामचरितम् में सात अंक हैं जिसमें मर्यादा पुरूषोत्तम राम तथा सीता के अयोध्या आगमन एवं राज्याभिषेक के पश्चात् उनके जीवन के उत्तरार्ध की घटनाओं को निबद्ध किया गया है। उत्तररामचरितम् भवभूति की वह सर्वोत्तम रचना है जिसमें काव्य सौन्दर्य अपनी उत्कृष्ट परिणति को प्राप्त हुआ है। रूपक, उपरूपक, प्रकृतिवर्णन, रसव्यंजना, नाट्य चरित्र निरूपण, मानवीय संवेदना एवं जीवनमूल्यों का सूक्ष्म और सटीक निरूपण जिस प्रकार से उत्तररामचरित में देखने को प्राप्त होता है वैसा शायद अन्यत्र ही देखने को मिले।

लंकाविजय के पश्चात् अयोध्या लौटने पर राम एवं सीता के उदात्त चरित्रों को उनके आगामी जीवन में घटित होने वाले अप्रत्याशित घटनाओं के मध्य भी उन्हें नक्षत्रगणों के मध्य भगवान भास्कर के समान देदीप्यमान रखने का जो दायित्वपूर्ण कविकर्म है उसका कुशलतापूर्वक निर्वहन भवभूति की काव्यसाधना का उत्तम नवनीत है।

मर्यादा पुरूषोत्तम राम एवं जनकनन्दिनी सीता के दाम्पत्य जीवन के निःस्वार्थ एवं निश्छल प्रेम को व्यक्त करते हुए भवभूति ने लिखा है-

“ अद्वैतं सुखदःसुखयोरनुगुणं सर्वास्वस्थासु यद,

विश्रामो हृदयस्य यत्र जरसा यस्मिन्नहार्यो रसः।

कालेनावरणात्यात्परिणते यत्स्नेहसारे स्थितं,

भद्रं तस्य सुमानुषस्य कथमप्येकं तत्प्राप्यते ।।[1]

अर्थात् जो सुख दुःख में एक रूप से रहने वाला है, जो सभी दशाओं में साथ रहने वाला होता है, जिनमें हृदय को विश्रान्ति मिलती है। जिस दाम्पत्य में अनुराग वृद्धावस्था द्वारा भी हरणीय नहीं होता, जो कालक्रमानुसार विवाह से मृत्युपर्यन्त परिपक्व प्रेम के सार के रूप में स्थिर रहता है, इस दाम्पत्य का अनिर्वचनीय एवं विलक्षण आनन्द सब प्रकार से प्राप्तव्य होता है।

अपि च,

स्नपयति हृदयेशं स्नेह निष्यन्दिनी ते, धवल बहलमुग्धा दुग्धकुल्येव दृष्टि।।

दाम्पत्यप्रणय हृदय का विश्राम है। यह दूध के समान धवल तथा गंगाजल की भाँति पावन है।

दाम्पत्य के शुद्ध प्रेम की अलौकिक ज्योति सुख के शीतल समीर एवं दुःख की प्रचण्ड आँधियों में भी एक समान रूप से अनवरत प्रदिप्त रहती है। वार्धक्य के कारण उसकी सरसता एवं दीप्ति में कोई परिवर्तन या कमी नहीं आती। ऐसा कल्याणकारी दाम्पत्य बन्धन तो मानव जीवन की अमूल्य श्रीनिधि है। जिसका स्वामित्व मनुष्य को अहंकारी एवं स्वार्थी न बनाकर उसे उसके मानवीय जीवन के दायित्वों एवं कर्तव्यों के निर्वहन हेतु प्रेरित करने वाली प्रेरणाशक्ति बन जाता है।

जीवन में आत्मीय जनों के महत्व को निर्विवाद रूप से स्वीकार करने के साथ ही भवभूति ने मानव के लिए स्वकर्तव्य निर्वहन की महत्ता का भी उल्लेख किया। एक प्रजापालक राजा के रूप में मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम का चरित्र चित्रण करते हुए भवभूति ने धर्मानुकूल प्रजानुरंजन को उत्तम राजसत्ता का अंगीभूत तत्त्व माना । राजसत्ता पर आसीन

होने वाले किसी भी व्यक्ति के लिए यह अपरिहार्य गुण है कि उसका स्वयं का जीवन प्रजा के लिए आदर्श स्वरूप हो। स्वहित के विषय में उदासीन रहते हुए उसे सर्वप्रथम राजहित तथा प्रजाहित का विचार करना चाहिए।

उत्तररामचरित के प्रथम अंक में एक राजा के रूप में सर्वप्रथम राजधर्म की इसी सर्वोच्चता को मान देते हुए मर्यादापुरूषोत्तम राम महर्षि वशिष्ठ से कहते हैं कि

"स्नेहं दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि ।

आराधनाय लोकस्य मुञ्चतो नास्ति में व्यथा।।[2]

अर्थात् प्रजाजनों की प्रसन्नता के लिए प्रेम, करूणा, सुख और यहाँ तक कि जानकी को छोडते हुए मुझे पीडा नहीं होगी।

राजधर्म निर्वहन हेतु स्वयं के हितों एवं प्रियजनों का भी परित्याग कर देने की अद्भुत आत्मशक्ति ही मानवता के मूलभूत सिद्धान्तों को संरक्षित कर सकती है। जहाँ एक व्यक्ति के हित से बडा समाज का हित होता है।

द्वितीय अंक में वासन्ती का कथन है कि –

वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि।

लोकोत्तराणां चेतांसि को हि विज्ञातुमर्हति।।[3]

अर्थात् वज्र से कठोर, पुष्प से भी कोमल, लोकश्रेष्ठ महापुरूषों के चित्त को कौन जान सकता है? अर्थात् कोई नहीं जान सकता।

भवभूति के उत्तररामचरित में प्रकृति का निरूपण एक काव्यसौन्दर्य बोधक तत्व न होकर मूल कथानक का महत्वपूर्ण अंग है। जहाँ पर नाटक में घटित होने वाली घटनाओं का प्रभाव प्रकृति पर भी पड़ते हुए दिखाया गया है।

प्रथम अंक में राम एवं सीता के साथ चित्रवीथि को देखते समय भूतकाल में रावण द्वारा सीता के अपहरण होने पर तत्समय राम की व्यथित मनोदशा का प्रकृति पर पडने वाले प्रभाव को स्मरण करते हुए लक्ष्मण कहते हैं कि

जनस्थाने शून्ये विकलकरणैरार्यचरितैं,

अपि ग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्य हृदयम्।।[4]

अर्थात् सूने जनस्थान में, नेत्रादि इन्द्रियसमूह को अपने–अपने विषय ग्रहण में असमर्थ बना देने वाले आपके

(श्रीराम) मूर्च्छा आदि व्यापारों से पत्थर भी रो पड़ा था।

प्रकृति का मानवीय संवेदनाओं के साथ इतना सूक्ष्म गुम्फन भवभूति का अपना वैशिष्ट्य है। मनुष्य के दुःखों के साथ प्रकृति की ऐसी भावानुभूति का जुड़ जाना कि निर्जीव पत्थर भी करूणा से रो पड़े, ऐसी भावाभिव्यंजना का अनुपमेय निर्दशन भवभूति की उत्तररामचरितम् के अलावा अन्यत्र मिलना कठिन है।

वैसे भी करूण रस तो उत्तररामचरित का प्राणभूत रस है। यद्यपि नाट्यशास्त्रीय परम्परा में वीर रस अथवा श्रृंगार रस को ही नाट्य के अंगीरस के रूप में स्वीकार किया जाता है, किन्तु उत्तररामचरितम् में भवभूति ने करूण रस का ऐसा विषयानुकूल संयोजन किया है कि संस्कृत साहित्य जगत की अनेकों गम्भीर तथा महान अधीतियों ने निर्विवाद रूप से करूण रस को ही "उत्तररामचरितम्" का अंगीरस स्वीकार किया है। स्वयं भवभूति ने अन्य सब रसों में करूण रस को विशेष महत्व प्रदान करते हुए कहा है –

एको रसः करूण एव निमित्तभेदाद्,

भिन्नः पृथक पृथगिव श्रयते विवर्तान्।

आवर्त बुद्बुदतरंगमयान् विकारां,

नम्भो यथा सलिलमेव हि तत् समस्तम्।।[5]

अर्थात् नाटक में करूण रस ही प्रधान है तथा श्रृंगार, वीर आदि आठ रसों को वही जन्म देता है। ये करूणरस के ही अलग– अलग रूप है। जिस प्रकार एक ही रूप वाला स्थिर जल बुलबुले एवं तरंगों के रूप में परिवर्तित होता रहता है। उसी प्रकार एक करूण रस ही अन्य रसों का रूप धारण कर जल के समान ही अपनी नाना प्रकार की आकृतियों को प्रकट किया करता है। यह श्लोक उत्तररामचरितम् नाटक का बीजमन्त्र है।

उपसंहार

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि उत्तररामचरितम् भवभूति की सर्वोत्तम रूपक रचना है जिसमें उन्होंने मूल कथानक को अपनी कल्पना शक्ति तथा काव्यशास्त्रीय पाण्डित्य से अध्येतागण के लिए इतना रमणीय तथा सुगम बना दिया कि अनेकों बार उत्तररामचरितम् को पढ़ने के बाद भी इसमें अंतर्निहित भावाभिव्यंजना का अद्भुत कलात्मक सौन्दर्य संस्कृत साहित्य के प्रत्येक अध्येता को बारम्बार उत्तररामचरितम् के अध्ययन हेतु प्रेरित करता है। अपने इस एक ग्रन्थ के माध्यम से संस्कृत साहित्य जगत् में सदैव के लिए आलोकित हो जाने वाले महाकवि भवभूति के विषय में यह कथन अक्षरशः सत्य है कि "उत्तररामचरितम् भवभूर्तिविशिष्यते"।

सन्दर्भ:

[1] उत्तररामचरितम् 1/29
[2] उत्तररामचरितम् 1/12
[3] उत्तररामचरितम् 2/7
[4] उत्तररामचरितम् 1/28
[5] उत्तररामचरितम् 3/47

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. भवभूति. *उत्तररामचरितम्* मूल ग्रन्थ.
2. त्रिपाठी, रमाशंकर (2018). *उत्तररामचरितम्*. वाराणसी: चौखम्भा कृष्णदास अकादमी.

Copyright © 2026 Author(s). Published by Siri Research Foundation. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution International License (CC BY 4.0).